

भारत में एशियाटिक सोसाइटी और विज्ञान का विकास

डॉ. संगीता कुमारी

एसोसिएट प्रोफेसर

आर्यभट्ट कॉलेज, साउथ कैंपस, दिल्ली विश्वविद्यालय

sangeetajnu2011@gmail.com

सारांश

भारत में पश्चिमी विज्ञान के आगमन ने कई मायनों में 'आधुनिक भारत' की पहचान स्थापित करने में निर्णायक भूमिका निभाई है, यह स्वयं विकास प्रक्रिया में रूपांतरित और पुर्नपरिभाषित हुआ है। यहाँ समय अवधि और क्षेत्र विशाल थे, यह अठारहवीं शताब्दी के अंत से लेकर वर्तमान समय तक कम से कम दो सौ वर्षों की कहानी है। इस समय अवधि में भारत के कई पहलुओं को शामिल किया गया और भारत को आधुनिक भारत में बदलने के लिए पश्चिमी विज्ञान के कई पहलुओं को भी शामिल किया गया। ये पश्चिमी ज्ञान प्रणाली द्वारा भारत की प्राकृतिक दुनिया की खोज, रेलवे और टेलीग्राम प्रणालियों का आना, यह विश्वास कि आधुनिक विज्ञान भारत को आधुनिक भारत में ले जा सकता है, एक साथ विज्ञान की भारतीय और वैकल्पिक परंपराओं की खोज सभी ने 1958 में एक स्वतंत्र भारत की नींव के रूप में भारतीय वैज्ञानिक नीति की घोषणा की। आधुनिक विज्ञान की अभिव्यक्ति दो विविध तरीकों से हुई। आधुनिक विज्ञान ने बड़ी संख्या में लोगों की कल्पना पर कब्जा कर लिया, वास्तव में, इसने कई मायनों में आधिपत्य का रूप ले लिया। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में विज्ञान के विचार-विमर्श के बारे में एक असाधारण लोकप्रिय संज्ञान और भागीदारी का विकास हुआ। नतीजतन, विज्ञान का विश्लेषण, विचार-विमर्श और बार-बार बहस की गई, फिर से विश्लेषण किया गया और इस प्रक्रिया में विज्ञान को फिर से परिभाषित

किया गया, सुधार किया गया और अंत में खुद को स्थापित किया गया। इस सब में एशियाटिक सोसाइटी ने एक प्रमुख भूमिका निभाई थी।

बीज शब्द: वेस्टर्न, साइंस, कॉलोनी, इंडिया, टोपोग्राफी, कल्चर, एशियाटिक सोसाइटी

भारत में पश्चिमी विज्ञान के आगमन ने कई मायनों में 'आधुनिक भारत' की पहचान स्थापित करने में निर्णायक भूमिका निभाई, यह स्वयं विकास प्रक्रिया में रूपांतरित और पुर्नपरिभाषित हुआ है। यहाँ समय अवधि और क्षेत्र विशाल थे, यह अठारहवीं शताब्दी के अंत से लेकर वर्तमान समय तक कम से कम दो सौ वर्षों की कहानी है। इस समय अवधि में भारत के कई पहलुओं को शामिल किया गया और भारत को आधुनिक भारत में बदलने के लिए पश्चिमी विज्ञान के कई पहलुओं को भी शामिल किया गया। ये पश्चिमी ज्ञान प्रणाली द्वारा भारत की प्राकृतिक दुनिया की खोज, रेलवे और टेलीग्राम प्रणालियों का आना, यह विश्वास कि आधुनिक विज्ञान भारत को आधुनिक भारत में ले जा सकता है, एक साथ विज्ञान की भारतीय और वैकल्पिक परंपराओं की खोज सभी ने 1958 में एक स्वतंत्र भारत की नींव के रूप में भारतीय वैज्ञानिक नीति की घोषणा की। आधुनिक विज्ञान की अभिव्यक्ति दो विविध तरीकों से हुई। आधुनिक विज्ञान ने बड़ी संख्या में लोगों की कल्पना पर कब्जा कर लिया, वास्तव में, इसने कई मायनों में आधिपत्य का रूप ले लिया। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में विज्ञान के विचार-विमर्श के बारे में एक असाधारण लोकप्रिय संज्ञान और भागीदारी का विकास हुआ। नतीजतन, विज्ञान का विश्लेषण, विचार-विमर्श और बार-बार बहस की गई, फिर से विश्लेषण किया गया और इस प्रक्रिया में विज्ञान को फिर से परिभाषित किया गया, सुधार किया गया और अंत में खुद को स्थापित किया गया। दूसरे, विज्ञान बढ़ती विशेषज्ञता और व्यावसायीकरण का मार्ग अपना रहा था। यूरोपीय विज्ञान अपने लौकिक और स्थानिक आयाम में अवस्थित था।

औपनिवेशिक भारत और आधुनिक विज्ञान

प्रारंभ में यूरोपीय अपने साथ औपनिवेशिक भारत में आधुनिक विज्ञान लेकर आए। अठारहवीं शताब्दी की शुरुआत से यूरोपीय साहसी, मिशनरी, चिकित्सा पुरुष और प्रकृतिवादी विविध स्तर की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि और वैज्ञानिक समझ के साथ भारत में आने लगे थे और अठारहवीं शताब्दी के अंत तक भारत में इस तरह के आगमन की गति उल्लेखनीय रूप से बढ़ गई थी। इसका आधार पुर्नजागरण और सत्रहवीं शताब्दी की वैज्ञानिक क्रांति के साथ वैज्ञानिक स्वभाव था जिसने यूरोपीय बौद्धिक जीवन को आकार दिया था। दूसरे, औद्योगीकरण की शुरुआत ने आगे के विकास के लिए वैज्ञानिक ज्ञान के उपयोग को अनिवार्य बना दिया। 1780-1900 की अवधि में न केवल यूरोपीय समाज में बल्कि उपनिवेशों में भी एक बड़ा परिवर्तन देखा गया। औद्योगीकरण की प्रक्रिया ने वैज्ञानिक ज्ञान और आविष्कारों की स्वीकृति को आसान बना दिया और उन्नीसवीं शताब्दी की शुरुआत तक विज्ञान एक सामाजिक रूप से संगठित बौद्धिक पहल के रूप में विकसित हुआ।¹ ब्रिटेन में इस अवधि के दौरान विज्ञान को बढ़ावा देने के लिए कई विशेष समाज स्थापित किए गए थे। उनमें से कुछ थे जियोलॉजिकल सोसाइटी ऑफ लंदन (1807), 1831 में ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइंस और इस समाज का मुख्य उद्देश्य अनुसंधान को बढ़ावा देना और संरक्षण देना था और इस उद्देश्य के लिए अनुसंधान अनुदान का विस्तार करना था, रॉयल एग्रीकल्चरल सोसाइटी (1838), रॉयल बॉटनिकल सोसाइटी ऑफ लंदन (1839) और जूलॉजिकल सोसाइटी ऑफ लंदन (1876)। भारत में भी ब्रिटेन की तर्ज पर कुछ समाजों की स्थापना की गई जैसे एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल (1784), बॉटनिकल गार्डन कलकत्ता (1787), बॉम्बे लिटरेरी सोसाइटी (1804) और बाद में इसे रॉयल एशियाटिक सोसाइटी की बॉम्बे शाखा के रूप में नामित किया गया। कलकत्ता, मद्रास और बॉम्बे में कई अन्य समितियां स्थापित की गईं, उदाहरण के लिए 1818 में मद्रास लिटरेरी सोसाइटी की स्थापना की गई थी। उपनिवेशों के संदर्भ में इन घटनाओं को समझते समय, किसी को यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि

¹ अधिक जानकारी के लिए देखें, पीटर एम. हेमैन, "द साइंटिफिक रिवोल्यूशन", द न्यू कैम्ब्रिज मॉडर्न हिस्ट्री, XIII, पीटर बर्क (सं.) कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1979 में

उपनिवेशों में विज्ञान का प्रसार बड़े यूरोपीय एजेंडे का हिस्सा था, यानी उपनिवेशवाद की बड़ी प्रक्रिया जिसके तहत यूरोप तेजी से दूसरों के क्षेत्रों को हासिल करने और नियंत्रित करने का प्रयास कर रहा था।² ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने बंगाल और उत्तर भारत में कई संघर्षों में प्रवेश किया और परिणामस्वरूप कंपनी के अधिकारी क्षेत्र की भौगोलिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त करने में सक्षम थे। नतीजतन, ग्रेट ट्रिगोनोमेट्रिकल सर्वे जैसे कई वैज्ञानिक सर्वेक्षण शुरू किए गए और हम यह भी देखते हैं कि मूल निवासियों के रीति-रिवाजों, अनुष्ठानों और प्रथाओं के लिए प्राच्यवादी खोज भी इस तरह के सर्वेक्षणों का कारण था। मूल निवासियों के भूगोल, रीति-रिवाजों, सांस्कृतिक और धार्मिक प्रथाओं की अर्जित समझ को अधिकार, शक्ति और वैधता की एक विशेष भाषा में संहिताबद्ध किया गया था। संहिताकरण की इस पूरी प्रक्रिया ने प्राचीन ग्रंथों के अनुवाद और पुर्नलेखन को जन्म दिया और हेस्टिंग्स के समय में इसे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता था। इस प्रकार, *जेंट कानूनों की संहिता, विरासत का मुस्लिम कानून* और कोलब्रुक का *द डाइजेस्ट ऑफ हिंदू लॉ* सभी का इस अवधि के दौरान अनुवाद किया गया था। इन सर्वेक्षणों और मूल निवासियों के भूगोल, रीति-रिवाजों, सांस्कृतिक और धार्मिक प्रथाओं के अनुवाद के माध्यम से प्राप्त ज्ञान ने ब्रिटिश राज्य को उनकी उपयुक्तता के अनुसार भारत की कल्पना और व्याख्या करने की शक्ति प्रदान की। यह पूरी प्रक्रिया हमें यूरोपीय लोगों द्वारा दी गई 'केंद्र' और 'परिधि' की अवधारणाओं की ओर ले जाती है और वैज्ञानिक ज्ञान और नवाचारों के प्रसार ने इन अवधारणाओं का पालन किया और इसलिए, उपनिवेशों (जिन्हें परिधि के रूप में माना जाता था) में सीमित वैज्ञानिक ज्ञान का प्रसार किया गया और बाद में वैज्ञानिक दिमाग वाले भारतीयों को भी विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान करने के लिए उचित वैज्ञानिक सुविधाएं नहीं दी गईं। इस संदर्भ में जॉर्ज बसाला ने तर्क दिया कि,

² इस बारे में अधिक जानकारी के लिए देखें, सीए बेली, *इंपीरियल मेरिडियन: द ब्रिटिश एम्पायर एंड द वर्ल्ड 1780-1830*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1989

"यदि लंदन और पेरिस के साथ यूरोप यूरोपीय विज्ञान के बढ़ते प्रभाव और ज्ञान का केंद्र था, तो औपनिवेशिक भारत ऐसी गतिविधियों की परिधि और पश्चिमी विज्ञान के केंद्र से परिधि तक प्रसार का प्रतिनिधित्व करता था।³

हाल के इतिहासलेखन से पता चलता है कि उपनिवेशों में पश्चिमी विज्ञान के मुख्य रूप से व्यावसायिक निहितार्थ थे। दीपक कुमार का तर्क है कि,

"उन्होंने कहा, "भारतीय स्थलाकृति, भूविज्ञान, वनस्पति विज्ञान पर शोध ज्यादातर वाणिज्यिक और प्रशासनिक कारकों द्वारा निर्देशित किया गया था। विज्ञान और संसाधनों के औपनिवेशिक शोषण, प्रशासनिक आवश्यकताओं के साथ-साथ औपनिवेशिक राज्य के नस्लीय पूर्वाग्रह के बीच स्पष्ट संबंध थे।⁴

एशियाई समाज

एशियाटिक सोसाइटी एक औपनिवेशिक संस्था थी, हालांकि यह औपनिवेशिक राज्य द्वारा स्थापित नहीं की गई थी। यह हमेशा अपने स्वायत्त संसाधन आधार को आगे बढ़ाने की आकांक्षा रखता है। शायद इसका सबसे महत्वपूर्ण पहलू इसका बौद्धिक झुकाव था, इसने हमेशा सत्य को खोजने की कोशिश की और बाद में इसने स्वायत्तता और औपनिवेशिक राज्य से अलग होने का आग्रह किया। इसने हमेशा खुद को ज्ञान के एक मूल केंद्र के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। हालांकि, यह एक उपनिवेश में स्थित एक औपनिवेशिक संस्था थी और इसलिए बौद्धिक और संस्थागत रूप से केंद्र के अधीन थी। किसी को यह नहीं भूलना चाहिए कि इसकी स्थापना औपनिवेशिक आकाओं की जरूरतों को पूरा करने के लिए की गई थी, यानी व्यापक पैमाने पर ज्ञान के संग्रह और संहिताकरण की महत्वाकांक्षी यूरोपीय परियोजना को पूरा करने के लिए। ओरिएंटल ज्ञान के संग्रह और संहिताकरण की पूरी प्रक्रिया में कई लोग शामिल थे। ये ज्यादातर

³ जॉर्ज बसाला, 'द स्प्रेड ऑफ वेस्टर्न साइंस', साइंस 156, 1967, पीपी.611-622

⁴ इस बारे में अधिक जानकारी के लिए देखें, दीपक कुमार, साइंस एंड द राज, 1857-1905, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1995 भी देखें, सतपाल सांगवान, साइंस, टेक्नोलॉजी एंड कॉलोनाइजेशन: एन इंडियन एक्सपीरियंस, 1757-1857, अनामिका प्रकाशन, दिल्ली, 1991

कंपनी के अधिकारी थे और वे ज्यादातर अपने आधिकारिक कर्तव्यों के बाहर विज्ञान की खोज में शामिल थे। वे भारत के विभिन्न हिस्सों में तैनात थे लेकिन वे विज्ञान के बारे में बहुत भावुक थे, इसलिए जहां भी उन्हें तैनात किया गया था, उन्होंने मिट्टी, पौधों और जानवरों का अध्ययन करना शुरू कर दिया और अपने निष्कर्षों के बारे में सोसाइटी की पत्रिकाओं में लिखा। जब से एडवर्ड सईद का काम 'ओरिएंटलिज्म' प्रकाशित हुआ, औपनिवेशिक भारत पर इतिहास लेखन पहले जैसा नहीं रहा। सईद ने न केवल 'ओरिएंट' के समाज और राजनीति से संबंधित विभिन्न धारणाओं पर सवाल उठाया, बल्कि साहित्य से लेकर नृविज्ञान तक पूर्व में विद्वता के विभिन्न क्षेत्रों के लिए भी गुंजाइश खोल दी।⁵ सईद ने आगे तर्क दिया कि,

"औपनिवेशिक काल के बाद से ओरिएंट के बारे में ज्ञान एक व्यवस्थित प्रवचन रहा है जिसके द्वारा यूरोप राजनीतिक, वैचारिक, समाजशास्त्रीय, सैन्य, वैज्ञानिक और कल्पनाशील रूप से 'ओरिएंट' को नियंत्रित करने और यहां तक कि पुर्ननिर्माण करने में सक्षम रहा है। ओरिएंट के यूरोपीय और अमेरिकी विचारों ने एक ऐसी स्थिति बनाई जिसमें ओरिएंट को रहने के लिए मजबूर किया गया था। ओरिएंट से ऑक्सिडेंट के अंतर को परिभाषित करने में, यूरोपीय ने वास्तव में बाद वाले पर पूर्व की शक्ति को वैध बना दिया था।⁶

सईद के लेखन में मुख्य रूप से पश्चिम एशिया के बारे में बात की गई है, इसने विद्वानों को इसी तर्ज पर भारतीय मामले की जांच करने के लिए प्रोत्साहित किया। नतीजतन, कुछ विद्वानों ने विशेष रूप से 18 वीं शताब्दी के अंत और 19 वीं शताब्दी की शुरुआत में ओरिएंटलिज्म के विषय के साथ विज्ञान के सांस्कृतिक और सामाजिक पहलुओं को जोड़ने वाले तर्क को सामने रखने की कोशिश⁷ की है। यहां हम मुख्य रूप से इस बात से चिंतित हैं कि कैसे अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में एशियाई समाज में और उसके आसपास विज्ञान की चर्चा आकार ले रही थी। कुछ विवरणों का विश्लेषण करके हम यह समझने की

⁵ एडवर्ड डब्ल्यू सैद, *ओरिएंटलिज्म*, रूटलेज और कीगन पॉल, लंदन, 1978

⁶ उक्त

⁷ गौरी विश्वनाथन, मास्क ऑफ कॉन्क्वेस्ट: लिटरेरी स्टडी एंड ब्रिटिश रूल इन इंडिया, फेबर एंड फेबर, लंदन, 1989 और डेविड लुडेन "ओरिएंटल एम्पिरिकिज्म: ट्रांसफॉर्मेशन ऑफ कोलोनियल नॉलेज", ब्रेकेनरिज et.al में संपादक

कोशिश करेंगे कि कैसे एक महानगरीय ज्ञान ने एक औपनिवेशिक व्यवस्था में खुद को स्पष्ट करने की कोशिश की और पूरी प्रक्रिया के लिए मूल निवासियों की प्रतिक्रियाएं क्या थीं। एक अन्य कारक जो विज्ञान के क्षेत्र में किसी भी विकास के लिए बहुत निर्णायक था, वह उपनिवेशों की आर्थिक वास्तविकताएं थीं। साम्राज्यवादी शक्तियां न केवल उपनिवेशों की प्राकृतिक दुनिया के बारे में जानने के लिए विज्ञान का उपयोग कर रही थीं, बल्कि वाणिज्यिक रूप से उपनिवेशों का और अधिक शोषण करने के लिए अपनी क्षमताओं को बढ़ाने के लिए भी कर रही थीं और भारत इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। इसने विज्ञान की धारणाओं को भी उदार प्रयास के रूप में बदल दिया और कैसे इसे व्यावसायिक लाभ के लिए अधिक से अधिक उपयोग किया जा सकता है और इसका परिणाम ब्रिटिश सरकार के तहत विभिन्न वैज्ञानिक विभागों की स्थापना थी। इससे एशियाटिक सोसाइटी पर पूरी तरह से निर्भरता भी टूट गई और इसलिए विज्ञान का उन्मुखीकरण भी बदल गया। बदली हुई स्थिति ने विज्ञान के अभ्यास में नए प्रकार की बातचीत को जन्म दिया - औपनिवेशिक साम्राज्य के लिए व्यावसायिक लाभ के लिए इसका सबसे अच्छा उपयोग कैसे किया जा सकता है।

अनुसंधान और प्रवचन में भारतीय वैज्ञानिकों के प्रवेश ने विभिन्न धारणाओं से वैज्ञानिक ज्ञान का प्रसार किया। महेंद्र लाल सरकार ने पश्चिमी विज्ञान में भारतीय सरोकारों को संस्थागत बनाने की दिशा में पहला प्रयास किया, जैसे कि उन्होंने 1876 में इंडियन एसोसिएशन फॉर द कल्टीवेशन ऑफ साइंस (आईएसीएस) की स्थापना की। संस्थान का पूरा उद्देश्य भारतीयों को वैज्ञानिक अनुसंधान करने और भारत में विज्ञान शिक्षा को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रोत्साहित करना था। जल्द ही संस्थान ने अपने आधार का विस्तार किया और इसकी सात इकाइयाँ खोली गईं: खगोल विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, रसायन विज्ञान, भौतिकी, भूविज्ञान, गणित और व्यवस्थित वनस्पति विज्ञान। यह संस्थान जल्द ही लोकप्रिय हो गया और इसकी लोकप्रियता को देखते हुए अन्य भारतीय व्यक्तियों ने भी इस दिशा में प्रयास किए। यह सब अंततः 1914 में भारतीय विज्ञान कांग्रेस एसोसिएशन के गठन का कारण बना। इन भारतीय प्रयासों को आमतौर पर

'राष्ट्रवादी' विज्ञान के विकास के रूप में जाना जाता है और दीपक कुमार, ध्रुव रैना, एस. इरफान हबीब, शिव विश्वनाथन जैसे विद्वानों ने विज्ञान के विकास के इस पहलू पर विस्तार से लिखा है।⁸

एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना रॉयल सोसाइटी के मॉडल पर की गई थी और यह जानोदय के बाद सामने आने वाली विज्ञान की धारणाओं पर उन्मुख थी। एशियाटिक सोसाइटी को उन्हीं धारणाओं के आधार पर औपनिवेशिक जांच में खुद को शामिल करना था। विलियम जोन्स ने एशियाटिक सोसाइटी के बारे में लिखते हुए 'सत्य और दृष्टि' पर अपने विचार बहुत स्पष्ट रूप से व्यक्त किए हैं-

"उन शब्दों के साथ हमेशा मिलना दर्दनाक होता है जो कोई अलग विचार नहीं बताते हैं और उस दर्द से बचने की एक प्राकृतिक झड़व हमें अक्सर पूछताछ करने के लिए उत्तेजित करती है, जिसके परिणाम का हमें स्पष्ट गर्भाधान देने के अलावा कोई अन्य उपयोग नहीं हो सकता है। अज्ञानता मन के लिए है जो नसों के लिए अत्यधिक अंधेरा है, दोनों एक असहज सनसनी का कारण बनते हैं और स्वाभाविक रूप से हम ज्ञान से प्यार करते हैं क्योंकि हम प्रकाश से प्यार करते हैं, तब भी जब हमारे पास अनिवार्य रूप से उपयोगी उद्देश्य को लागू करने का कोई डिज़ाइन नहीं होता है।⁹

चूंकि औपनिवेशिक शक्तियां उपनिवेशों के भूगोल, संस्कृति, धर्म, समाज, राजनीति को जानना चाहती थीं और इस प्रकार उपनिवेशों में होने वाले किसी भी वैज्ञानिक प्रयास के लिए अन्वेषण की भावना प्रमुख हो गई। एशियाटिक सोसाइटी का उद्घाटन करते हुए जोन्स ने इस बात पर प्रकाश डाला कि तलाशने के लिए बहुत कुछ है-

"मैं यह टिप्पणी करने में मदद नहीं कर सकता था कि एक क्षेत्र कितना महत्वपूर्ण और व्यापक था, और कितने ठोस लाभ अपरिवर्तित थे और जब मैंने दर्द के साथ विचार किया कि जीवन की उतार-

⁸ दीपक कुमार, विज्ञान और राज, 1857-1905, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1998, एस. इरफान हबीब और ध्रुव रैना (सं.), औपनिवेशिक भारत में विज्ञान का सामाजिक इतिहास, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2007

⁹ एशियाटिक रिसर्च, जिसमें *इतिहास और पुरावशेष शामिल हैं, एशिया के कला, विज्ञान और साहित्य, खंड II, 1790*, पृष्ठ 315

चढ़ाव वाली अपूर्ण और सीमित परिस्थितियों में इस तरह की पूछताछ और सुधार, केवल कई लोगों के एकजुट प्रयासों से ही किए जा सकते हैं।¹⁰

जोन्स ने अपने सहयोगियों को दिए निर्देश इस संबंध में बहुत स्पष्ट थे-

"आप प्रकृति के अद्भुत ताने-बाने में जो कुछ भी दुर्लभ है, उसकी जांच करेंगे, नए अवलोकन और खोजों से 'एशिया' के भूगोल को सही करेंगे" ¹¹

जोन्स ने इस पूरी परियोजना की 'यूरोपीयता' को बहुत अच्छी तरह से व्यक्त किया था-

"यूरोपीय दिमाग में एक सक्रिय भावना है जिसे कोई भी जलवायु या स्थिति पूरी तरह से दबा नहीं सकती है, जो प्राचीन धारणा को सही ठहराती है, परिश्रम का परिवर्तन गुलाब की एक प्रजाति है और जो ऐसा लगता है कि कुछ भी नहीं किया गया है या सीखा नहीं गया है, जबकि कुछ भी अनिष्पादित नहीं किया गया है।¹²

जोन्स का उपरोक्त कथन कई मायनों में पश्चिमी विज्ञान की 'शक्ति' की पुष्टि था और कई मायनों में यह उपनिवेशवाद ही है जिसने पश्चिमी ज्ञान को यह शक्ति प्रदान की। यदि हम ह्यूग फाल्कनर के भूवैज्ञानिक शोधों को देखें तो हम पाते हैं कि वे एक अर्थ में प्रकृति को 'आदेश' देने के लिए यूरोपीय धारणा की उस 'शक्ति' का अनुप्रयोग थे-

"सर्वशक्तिमान ने हमें कारण दिया है, और हमें उस शक्ति के पर्याप्त प्रयोग से, सृष्टिकर्ता के कानूनों और व्यवस्था की जांच करने के लिए छोड़ दिया है।¹³

औपनिवेशिक वैज्ञानिक कई मायनों में प्रकृति को समझने में प्रयोगों, टिप्पणियों और मानवीय हस्तक्षेप पर बेकन के जोर से प्रभावित थे और वे प्राच्य प्रकृति को समझने में भी बेकन के विचार को लागू करना चाहते

¹⁰ एशियाटिक शोध, "एक समाज की संस्था पर एक प्रवचन। एशिया के इतिहास, नागरिक और प्राकृतिक और पुरावशेषों, कला, विज्ञान और साहित्य में पूछताछ के लिए", खंड I, पीपी xii-xiii

¹¹ उक्त/ पी. XIII

¹² एशियाई शोध, परिचय, वॉल्यूम I, 17788, पृष्ठ 1.

¹³ चार्ल्स मर्चिसन (सं.) *स्वर्गीय ह्यूग फाल्कनर*, लंदन, रॉबर्ट हार्डविक, 1868, खंड I, पृष्ठ Lii

थे। इस प्रकार उनके लिए विज्ञान ओरिएंट लोगों की प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का साधन बन गया और अंततः उस भूमि को एक आदेश दिया जिसे उन्होंने अव्यवस्था का सामना करना पड़ रहा था।

अठारहवीं शताब्दी के अंत में विलियम लैम्बटन ने भारत की विस्तृत स्थलाकृतिक की समझ रखने के लिए त्रिकोणमितीय सर्वेक्षण किए। इन अभ्यासों का पूरा उद्देश्य सही गणितीय गणना के आधार पर भूमि की भौगोलिक विशेषताओं की बेहतर समझना था ताकि मानचित्र तैयार किए जा सकें। इस अभ्यास ने इतना महत्व ग्रहण किया कि 1905 में भारत के महासर्वेक्षक सिडनी बरैंड ने पहले किए गए कार्यों को देखते हुए टिप्पणी की-

"एक राष्ट्रीय सर्वेक्षण का प्राथमिक उद्देश्य मानचित्र बनाना है, और सभी संचालन उसी उद्देश्य के अधीन हैं।¹⁴

भूविज्ञानी कैम्बेल ने भी टिप्पणी की है कि-

"भारतीय भूविज्ञान के बारे में जानकारी एकत्र करने में, सबसे बड़ी कठिनाई यह प्रतीत होती है कि ऐसे लोगों की संख्या, जिनके पास खोज के लिए समय और अवसर हैं, बहुत कम हैं; लेकिन अगर हर कोई जो इस विषय पर ध्यान देने का विकल्प चुनता है, अपने स्टेशन से सटे देश के हिस्से का सटीक विवरण संकलित करने के लिए खुद को लागू करेगा, तो जल्द ही अलग-थलग स्थानों के भूविज्ञान का एक मूल्यवान संग्रह होना चाहिए, जो उन वैज्ञानिक गतिविधियों में सरकार द्वारा नियोजित लोग जल्द ही और आसानी से एक साथ जुड़ सकते हैं।¹⁵

¹⁴ डी.एन. वाडिया, "पिछले पच्चीस वर्षों के दौरान भारत में भूविज्ञान और भूगोल की प्रगति", बी. प्रसाद (सं.), द प्रोग्रेस ऑफ साइंस इन इंडिया इयूरिंग द पास्ट ट्वेंटी फाइव इयर्स, कलकत्ता, 1938, पृष्ठ 125.

¹⁵ कैप्टन जे. कैम्बेल, "भारत में भूवैज्ञानिक विज्ञान की उन्नति पर" मद्रास जर्नल ऑफ लिटरेचर एंड साइंस, खंड II 1840, पृष्ठ 81

इन सभी अभ्यासों के माध्यम से कॉलोनी की मिट्टी, पौधों, चट्टानों का विश्लेषण और उन्हें समझ लिया जाना था और अंत में इसे यूरोपीय ज्ञान प्रणाली में शामिल करने की आवश्यकता थी।¹⁶ अधिकांश ब्रिटिश अधिकारी सह वैज्ञानिक चिकित्सा, भूविज्ञान, वनस्पति विज्ञान, कानून आदि जैसे विविध क्षेत्रों से आते थे, लेकिन उनके बहुत विविध हित थे और वे हमेशा किसी भी भूमि का पता लगाने के लिए उत्साहित रहते थे जो उनके रोजगार स्थान ने उन्हें उपनिवेशों में प्रदान किया था। कई मामलों में उन्होंने कंपनी से किसी भी वित्तीय सहायता के बिना अपने दम पर इस तरह के अध्ययन किए। वे हमेशा अपने अध्ययन को पूरा करने के लिए वैज्ञानिक उपकरणों को प्राप्त करने में समस्याओं का सामना करते हैं और उनमें से कई ने अपने स्वयं के उपकरणों को तैयार किया क्योंकि ब्रिटेन से उन उपकरणों को प्राप्त करना कठिन और समय लेने वाली प्रक्रिया थी। उदाहरण के लिए, विलियम गिलक्रिस्ट, जो मद्रास अस्पताल में थे, ने एक बैरोमीटर और एक धातु ट्यूब बैरोमीटर विकसित किया। यह वैज्ञानिक सटीकता के साथ वातावरण के अलग-अलग दबाव को मापने में बहुत मददगार हो गया। जेम्स प्रिंसेप ने कई खगोलीय और मौसम संबंधी उपकरण भी विकसित किए। उन्होंने एक प्लुवियोमीटर (बारिश की गिरावट को मापने के लिए) और एक वाष्पीकरण मीटर (वाष्पीकरण की गहराई का पता लगाने के लिए) भी बनाया।¹⁷

ये व्यक्ति और उनके अध्ययन और प्रयोग भौगोलिक और सांस्कृतिक रूप से 'अन्य' तक पहुंच और समझ रखने के लिए एशियाटिक सोसाइटी की भव्य परियोजना का हिस्सा बन गए। सांस्कृतिक रूप से वे भारतीय समाज, परंपरा, धर्म, कानून के विविध पहलुओं को जानने के लिए उत्सुक थे जो उनकी सोच में भारत के बारे में प्राच्यवादी ज्ञान का निर्माण करते हैं। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि भारतीय स्थलाकृति और अन्य पहलुओं के वैज्ञानिक ज्ञान ने शाही सरकार को आने वाले वर्षों में शासन करने के लिए आवश्यक परिसर प्रदान किया।

¹⁶ इस बारे में अधिक जानकारी के लिए देखें, मार्टिन रुडविक, "भूवैज्ञानिक यात्रा और सैद्धांतिक नवाचार: 'सीमांत अनुभव' की भूमिका, *विज्ञान के सामाजिक अध्ययन*, खंड 26, 1996, पीपी.143-159

¹⁷ जेम्स प्रिंसेप, "बनारस में निर्मित एक प्लुवियोमीटर और वाष्पीकरण का विवरण", *एशियाटिक रिसर्च*, खंड XV. 1825, पृष्ठ XIII